‘स्वामी दयानन्द को वेदों की प्राप्ति कब, कहां व किससे हुई?’

आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती को वेदों की उपलब्धि कब, कहां व किससे हुई, यह प्रश्न आज भी अनुत्तरित है। हम नुः इस विषय में विचार कर रहे हैं। महर्षि दयानन्द वेदों को ईश्वरीय ज्ञान, सब सत्य विद्याओं का पुस्तक, धर्म का आदि स्रोत एवं धर्म विषय में परम प्रमाण मानते थे और वेदों का अध्ययन, इनका पढ़ना, पढ़ाना, सुनना व सुनाने को सब मनुष्यों का परम धर्म मानते थे। वस्तुतः यह बात सर्वांश में सत्य है परन्तु अति पवित्र हृदय वाले धर्मात्मा व सत्य के प्रेमी तथा धार्मिक साहित्य के तुलनात्मक अध्येता व गवेषक ही इसमें निहित रहस्य को समझ सकते हैं। स्वामी जी ने सन् 1875 व कुछ समय बाद वेदों का संस्कृत व हिन्दी में भाष्य करना आरम्भ किया था। इसका कारण वेदों के नाम पर सदियों से प्रचारित व प्रसारित मिथ्या मान्यताओं का खण्डन एवं सत्य वेदार्थ का प्रकाश करना था। प्राचीन वैदिक साहित्य एवं महाभारतोत्तर कालीन समस्त धार्मिक साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन करने पर इस तथ्य की पुष्टि होती है कि यथार्थ वेदार्थ संसार में कहीं उपलब्ध नहीं था। अतः इस महनीय कार्य को उन्होंने प्रमुखता दी और अपने व्यस्त जीवन में इस कार्य को योजनाबद्ध रूप से करते हुए इसके लिए सभी सुख सुविधाओं का त्याग कर अपूर्व पुरूषार्थ किया। 30 अक्तूबर सन् 1883 ई. को मृत्यु तक वह यजुर्वेद का भाष्य पूर्ण कर चुके थे तथा ऋग्वेद के मण्डल 7 सूक्त 61 मन्त्र 2 तक का भाष्य कर लिया था। शेष ऋग्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद का भाष्य करना अभी शेष था। मृत्यु हो जाने के कारण शेष कार्य वह पूर्ण न कर सके परन्तु उनके अनेक शिष्यों ने वेदों पर अनेक भाष्य लिख कर इस कार्य को पूरा किया। चार वेदों को महर्षि दयानन्द ने युक्ति, प्रमाण, तर्क, सृष्टिकर्मानुरूप, ज्ञान व विज्ञान के आधार पर सत्य सिद्ध किया जिससे वह संसार की समस्त मानवजाति के लिए परम प्रमाण सिद्ध हुए। यही कारण था कि संसार का उपकार करने के लिए उन्होंने वेद की सत्य के विरूद्ध मान्यताओं का खण्डन किया और वेद विरोधी मत, सम्प्रदायों, धार्मिक संगठनों को शास्त्रार्थ व शंका-समाधान करने की चुनौती दी और इसके परिणामस्वरूप चार वेद ही सर्वत्र सत्य व प्रमाणिक सिद्ध हुए।

महर्षि दयानन्द को यह चार वेद मन्त्र संहितायें कब, कहां व किससे प्राप्त हुई थी? इस प्रश्न पर विचार करते हैं। इसके दो सम्भावित उत्तर हैं, पहला यह कि उन्होंने प्रो. मैक्समूलर द्वारा सन् 1856 में प्रकाशित ऋग्वेद भाष्य व अन्य पाश्चात्य विद्वानों द्वारा प्रकाशित इतर वेदों के भाष्य इंग्लैण्ड से

मंगाये थे। उनके उपलब्ध पत्रादि साहित्य में इन्हें मंगाने का उल्लेख नहीं मिलता परन्तु यह महर्षि दयानन्द के पास सन् 1883 में मृत्यु के समय उपलब्ध थे वा इनके भाष्य व लेखों में इन सबका उल्लेख मिलता है, अतः उन्होंने इन्हें अवश्य ही इंग्लैण्ड से स्वयं या अपने किसी अनुयायी के सहयोग से मंगाया होगा, ऐसा अनुमान होता है। दूसरी सम्भावना यह है कि उन्होंने अपने गृह त्याग के बाद से ही देश के अनेक भागों में जा-जाकर अनेक ग्रन्थों को खोज कर पढ़ा था। इस कारण उनको यह ज्ञान था कि देश के किन-किन स्थान के पुस्तकालयों और व्यक्ति विशेषों के पास कौन-कौन से ग्रन्थ उपलब्ध हैं। अतः आवश्यकता पड़ने पर उन्होंने उन ज्ञात स्थानों में जाकर वेदों को प्राप्त किया होगा, ऐसा होना सम्भव है। सन् 1867 से पूर्व उन्हें चारों वेदों की उपलब्ध हो चुकी थी, ऐसा पं. लेखराम कृत उनके वृहत एवं खोजपूर्ण जीवन चरित्र से विदित होता है। हम यहां इससे जुड़ी दो घटनायें प्रस्तुत करते हैं।

यह घटना सन् 1864 की है जिसका शीर्षक है वेदों की खोज में धौलपुर की ओर प्रस्थान—"एक दिन स्वामी जी ने पंडित सुन्दरलाल जी से कहा कि कहीं से वेद की पुस्तक लानी चाहिए। सुन्दर लाल जी बड़ी-खोज करने के पश्चात् पंडित चेतोलाल जी और कालिदास जी से कुछ पत्रे वेद के लाये। स्वामीजी ने उन पत्रों को देखकर कहा कि यह थोड़े हैं, इनसे कुछ काम न निकलेगा। हम बाहर जाकर कहीं से मांग लावेंगे। आगरा में ठहरने की अवस्था में स्वामीजी समय-समय पर पत्र द्वारा अथवा स्वयं मिलकर विरजानन्द जी से अपने सन्देह निवृत कर लिया करते थे।" इस विवरण से यह ज्ञात होता है कि उन दिनों स्वामीजी के पास लन्दन में प्रकाशित जिन्हें किम्वदन्ती के रूप में जर्मनी वाले वेद कहा जाता था, नहीं थे। इससे यह भी पता चलता है कि देश में वेदों की उपलब्धि थी, उसके स्थान के बारे में सम्भवतः स्वामीजी को ज्ञान था, तभी उन्होंने कहा कि हम बाहर जाकर कहीं से मांग लावेंगे।

पं. लेखराम रचित जीवन चरित में सन् 1867 की यह दूसरी घटना भी दी गई है। शीर्षक है कि "उन्हें केवल वेद ही मान्य थे-स्वामी महानन्द सरस्वती, जो उस समय दादूपंथ में थे--इस कुम्भ पर (स्वामी महानन्द) स्वामीजी से मिले। उनकी संस्कृत की अच्छी योग्यता है। वह कहते हैं कि स्वामी जी ने उस समय रूद्राक्ष की माला, जिसमें एक-एक बिल्लौर या स्फटिक का दाना पड़ा हुआ था, पहनी हुई थी परन्तु धार्मिक रूप में नहीं। हमने वेदों के दर्शन, वहां स्वामी जी के पास किये, उससे पहले वेद नहीं देखे थे। हम बहुत प्रसन्न हुए कि आप वेद का अर्थ जानते हैं। उस समय स्वामीजी

वेदों के अतिरिक्त किसी को (स्वतः प्रमाण) न मानते थे।" इस प्रमाण से यह स्पष्ट है कि सन् 1867 व उससे पहले से स्वामी जी के पास वेद उपलब्ध थे। हम यह भी बताना चाहते हैं कि स्वामी महानन्द सरस्वती देहरादून में रहते थे। स्वामी दयानन्द जी से मिलने के बाद उन्होंने देहरादून स्थिति अपने "महानन्द आश्रम" को "महानन्द आश्रम अर्थात् आर्य समाज" का नाम दिया था। हम इसी आर्य समाज के सदस्य रहे हैं। आज यह आर्य समाज धामावाला, देहरादून के नाम से विद्यमान है। अब यह कहना कठिन है कि स्वामी महानन्द जी ने स्वामी दयानन्द जी के पास जो वेद देखे वह वस्तुत चारों वेद थे अथवा कुछ कम थे। यह इंग्लैण्ड में प्रो. मैक्समूलर व अन्यों द्वारा प्रकाशित थे या भारत में उपलब्ध हस्त-लिखित थे। जो भी हो स्वामी जी के पास सन् 1867 में वेद थे और वह चारों वेद थे, यही अनुमान कर सकते हैं। यदि यह वेद हस्त-लिखित थे, जो कि इस आधार पर सम्भव है क्योंकि स्वामी जी ने धौलपुर में सुन्दरलाल जी को कहा था कि हम बाहर जाकर मांग लायेंगे। यह देश में प्राप्त वेद कौन-कौन से कहां व किससे कब प्राप्त हुए, इसका विवरण अज्ञात है।

2 नवम्बर, 2014 को हरिद्वार में वेदों के सुप्रसिद्ध विद्वान वेदमूर्ति आचार्य रामनाथ वेदालंकार की जन्मशती समारोह मनाया गया। इस अवसर पर "श्रुति-मन्थन" नाम से एक स्मृति ग्रन्थ का लोकार्पण भी हुआ। इस ग्रन्थ में हमारे प्रश्नों से मिलते-जुलते कुछ प्रश्नों को लेकर आचार्य रामनाथ वेदालंकार का डा. भवनीलाल भारतीय तथा पं. युधिष्ठिर मीमांसक से पत्राचार दिया गया है। डा. भवानीलाल भारतीय द्वारा आचार्य रामनाथ वेदालंकार को उनके पत्र के उत्तर में दिनांक 10-9-1987 को प्रेषित पत्र में कहा गया है कि "स्वामी दयानन्द द्वारा भारत में जर्मनी से वेद मंगाने की बात एक किंवदन्ती या प्रवाद मात्र है। स्वामी जी के कार्य क्षेत्र में उतरने से पूर्व प्रो. मैक्समूलर ने आक्सफोर्ड (इंग्लैण्ड) से ऋग्वेद संहिता तथा उसके सायण भाष्य का सम्पादन व प्रकाशन किया था। इसके लिये उसे ईस्ट इण्डिया कम्पनी से आर्थिक सहायता मिली थी। 1856 का छपा यह संस्करण स्वामीजी के निजी पुस्तक संग्रह में था और आज भी अजमेर (परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित वैदिक पुस्तकालय में) उपलब्ध है। इसे ही स्वामीजी ने इंग्लैण्ड से मंगाया होगा। क्योंकि मैक्समूलर जर्मन था और उसी ने उक्त संस्करण का सम्पादन किया, अतः यह प्रवाद प्रचलित हो गया कि स्वामीजी ने वेद जर्मनी से मंगाये थे। चारों वेद स्वामीजी ने विदेश से नहीं मंगाये। यजुर्वेद और सामवेद तो उन्हें भारत में ही मिल गये होंगे। अर्थववेद का एक अमेरिका में प्रकाशित संस्करण स्वामीजी को उनके गुजराती भक्त मथुरादास लवजी ने भेंट किया था। (अमेरिका में अथर्ववेद

प्रकाशित हुआ यह हमने इस पत्राचार से पहली बार जाना है) यह पुस्तक भी परोपकारिणी सभा के संग्रह में है। स्वामीजी ने किसी मूल संहिता को अपने जीवनकाल में मुद्रित नहीं कराया। यह कथन पूर्णतया गलत है कि उन्होंने चारों वेद भारत में बाहर से मंगा कर मुद्रित कराये। वैदिक यन्त्रालय से चारों संहिताएं छपी हैं, किन्तु यह स्वामी जी के निधन के बाद में छपीं।" डा. भवानीलाल भारतीय के इस कथन कि चारों वेद स्वामीजी ने विदेश से नहीं मंगाये (केवल प्रो. मैक्समूलर द्वारा प्रकाशित ऋग्वेद ही मंगाया), यजुर्वेद और सामवेद तो उन्हें भारत में ही मिल गये होंगे, हमें लगता है कि डा. भारतीय के शोधार्थी एवं शोधार्थियों के निदेशक रहने के कारण उनका कथन सत्य की कोटि में आता है।

डा. भवानीलाल भारतीय ने उक्त जानकारी देने के साथ डा. रामनाथ वेदालंकार जी को शेष जानकारी वेद और आर्य साहित्य के प्रसिद्ध गवेषक पं. युधिष्ठिर मीमांसक जी से प्राप्त करने का परामर्श दिया। पं. युधिष्ठिर मीमांसक जी ने आचार्य रामनाथ वेदालंकार जी को 2 अक्तूबर, 1987 लिखा—"अजमेर से चारों वेद संवत् 1955 और 1956 (सन् 1899 व 2000) के आसपास छपे हैं। उससे पहले पं. गुरूदत्त जी ने चारों वेद विरजानन्द प्रेस लाहौर से छपवाये थे (संवत् 1948 वा सन् 1892 ई. में ऋग्वेद व शेष वेद सम्भवतः उसके बाद)। ..... अथर्ववेद के सम्बन्ध में जहां तक मेरी स्मृति है (यह संस्करण हमारे पास अर्थात् पं. मीमांसक जी के पास नहीं है) शंकर पांडुरंग द्वारा छपवाये गये सायण भाष्य के आधार पर मन्त्र पाठ छपा है। .... अजमेर की ऋग् और यजुर्वेद संहिताएं निश्चय ही पं. गुरूदत्त जी के संस्करणों पर आधृत हैं। ... जहा तक यह प्रवाद है कि ऋषि दयानन्द ने चारों वेद जर्मनी से मंगाये थे, इसमें इतनी सच्चाई है कि उस समय तक भारतवर्ष में वेदों का प्रकाशन नहीं हुआ था। चारों वेद प्रथम बार योरोप में छपे थे और स्वामी जी ने उन्हीं संस्करणों का आश्रय लिया था। अथर्ववेद के उद्धरण राथ ह्विटनी के संस्करण से ही ऋषि दयानन्द ने अपने ग्रन्थों में दिये हैं। राथ ह्विटनी के संस्करण में 20 वां काण्ड नहीं छपा था। ऋषि दयानन्द के हस्तलेख संग्रह में अथर्ववेद के 2-3 हस्तलेख विद्यमान थे। ..... योरोप से सामवेद के संभवतः 2 संस्करण छपे थे।"

डा. भारतीय और पं. युधिष्ठिर मीमांसक जी के पत्रों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि महर्षि दयानन्द ने इंग्लैण्ड से आक्सफोर्ड द्वारा प्रकाशित प्रो. मैक्समूलर द्वारा प्रकाशित ऋग्वेद व इसके सायण भाष्य को मंगाया था। अन्य विदेशी विद्वानों के इतर तीन वेद वा उनके भाष्य सन् 1869 से पूर्व प्रकाशित हुवे थे या नहीं, इसका प्रमाणिक उत्तर उपलब्ध नहीं होता। यदि वहां अन्य तीन वेद व

उनके भाष्य उपलब्ध रहे होंगे तो उन्हें मंगाये जाने का अनुमान किया जा सकता है। यह वेद कब-कब, कैसे प्राप्त किये गये, इसकी जानकारी भी उपलब्ध नहीं है परन्तु इन ग्रन्थों की स्वामी दयानन्द के साहित्य में उपलब्धता अथवा उल्लेख इनको यथासमय मंगाये जाने का प्रमाण है। उपर्युक्त पत्राचार से यह भी ज्ञात होता है कि स्वामीजी को भारत में भी यत्र-तत्र वेदों की पूर्ण-अपूर्ण हस्तलिखित प्रतियां प्राप्त हुईं थी। इन हस्त लिखित वेद की प्रतियों की प्राप्ति का स्रोत परोपकारिणी सभा द्वारा स्वामीजी की मृत्यु के अवसर पर उपलब्ध साहित्य का विवरण प्रकाशित न किये जाने के कारण सुलभ नहीं है। एतदर्थ हमने एक पत्र परोपकारिणी सभा को इमेल भी किया परन्तु वहां उसकी अनदेखी की गई। कारण कुछ भी हो सकते हैं। यदि उनकी इच्छा होती तो विगत 131 वर्षों में वह महर्षि दयानन्द के पास उपलब्ध हस्तलिखित ग्रन्थों, पाण्डुलिपियों व मुद्रित ग्रन्थों का विवरण प्रकाशित कर सकते थे। हमारा अनुमान है कि हमने महर्षि दयानन्द के विस्तृत साहित्य में कहीं पढ़ा है कि स्वामीजी की 30 अक्तूबर, सन् 1883 को अजमेर में मृत्यु होने पर परोपकारिणी सभा के तत्कालीन मंत्री श्री मोहनलाल विष्णुलाल पंण्डया ने उनके सभी ग्रन्थों की सूची तैयार की थी। यदि वह सभा के अभिलेख में उपलब्ध है तो उसका प्रकाशन होना चाहिये, इसकी हम सभा से मांग करते हैं।

यहां हम कुछ चर्चा इस बात की भी कर लेते हैं कि महर्षि दयानन्द ने नवम्बर, 1869 से पूर्व कई बार काशी के विद्वानों को मूर्ति पूजा को वेदों से सिद्ध करने की चुनौती दी थी। अन्ततः नवम्बर, 1869 में शास्त्रार्थ हुआ था। यहां यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या काशी के पण्डितों के पास चार वेद थे। यदि नहीं थे तो उन्होंने यह क्यों नहीं कहा कि उनके पास वेद नहीं हैं, शास्त्रार्थ से पहले स्वामी दयानन्द उन्हें वेद उपलब्ध करायें। इसका निष्कर्ष तो यही निकलता है कि उनके पास चार वेद थे। यह बात अलग है कि उनका अध्ययन-अध्यापन बन्द हो चुका था और सत्य वेदार्थ भी काशी व अन्य किसी सनातन धर्मी पौराणिक पण्डित जी को मालूम नहीं थे। यह भी महत्वपूर्ण है कि काशी के पण्डित शास्त्रार्थ करने तो आये परन्तु उन्होंने वेद के किसी मन्त्र को मूर्ति पूजा के समर्थन में प्रस्तुत नहीं किया। इससे दो बातें सामने आती हैं कि या तो वेद उनके पास थे ही नहीं और यदि थे तो उन्हें किसी भी वेद में मूर्ति पूजा किये जाने का विधान नहीं मिला था। आज तक भी मूर्ति पूजा के समर्थक पौराणिक विद्वान वेद का कोई मन्त्र प्रस्तुत नही कर सके। मूर्तिपूजा की समर्थक जो भी तर्क व युक्तियां हो सकती हैं, उन सबको एकत्र कर स्वामी दयानन्द जी ने सन् 1875 में प्रकाशित अपने

ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में प्रबल युक्तियों से खण्डन कर दिया है। अब ऐसी कोई युक्ति भी नहीं है जिसे मूर्तिपूजा के मण्डन में हमारे पौराणिक भाई प्रस्तुत कर सकें।

इन्हीं पक्तियों के साथ हम इस लेख को विराम देते हैं। हमें लगता है कि हमारे इस प्रश्न कि महर्षि दयानन्द को चारों वेद वा मंत्र संहितायें कब, कहां, किससे व कैसे प्राप्त हुईं, का विस्तृत उत्तर मिलना अब सम्भव नहीं है। काश की महर्षि दयानन्द की मृत्यु से पूर्व किसी ने उनसे यही प्रश्न किया होता तो महर्षि ने उसका विस्तृत उत्तर दे दिया होता।

-मनमोहन कुमार आर्य
पताः 196 चुक्खूवाला-2
देहरादून-248001
फोनः 09412985121